सजीवों का वर्गीकरणः कुछ सुझाव

एन. कृष्णनकुट्टी और एस. चंद्रशेखरन

बाह्य आकार यानी मॉर्फोलॉजी के आधार पर सजीवों का वर्गीकरण कार्ल लीनियस की बुद्धिमत्ता की एक ऐसी देन है जिसका उपयोग पूरे संसार में वर्गीकरण विशेषज्ञ (टेक्सॉनॉमिस्ट) आज भी करते हैं। जैव विविधता को लेकर वर्गीकरण विज्ञान में जो अवरोध हैं उनसे निपटने के लिए इसके अलावा कोई अन्य वैकल्पिक प्रणाली उपलब्ध नहीं है। इसमें कई अंतर्निहित खामियां हैं मगर कई सदाबहार गुण भी हैं। विज्ञान की यह शाखा भारत में संकटों में घिरी है। इस प्रणाली में सुधार के लिए हमने कुछ व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत किए हैं जिनका सम्बंध वर्गीकरण सम्बंधी प्रकाशनों, नमूने इकट्ठा करने की विधियों, प्रारूप नमूनों के परिरक्षण और रख-रखाव, तथा वर्गीकरण अभिलेखों में सुधार और गैर-विशेषज्ञों के लिए सुविधाजनक पहचान-कुंजियों के निर्माण से है।

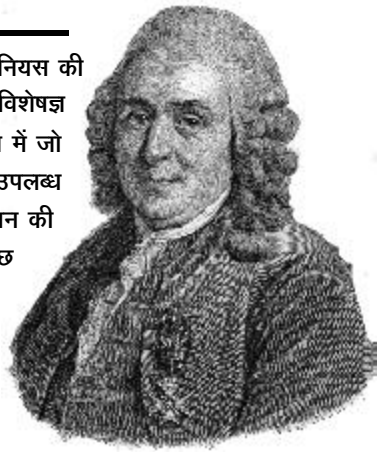

जीवशास्त्र की अलग-अलग शाखाओं के जनक होने का खिताब कई अलग-अलग वैज्ञानिकों को दिया जाता है। लीनियस को वर्गीकरण विज्ञान का केवल जनक ही नहीं पितामह भी कहा जा सकता है। वर्गीकरण विज्ञान की ठोस अवधारणात्मक बुनियाद उनके ही दिमाग की उपज है। उन्होंने अपनी असीम ऊर्जा का उपयोग करके जीवशास्त्र की इस शाखा को अधिक व्यवस्थित और विश्वसनीय बनाया। जीवशास्त्र के इतिहास में निम्नलिखित कामों को करने वाले लीनियस पहले व्यक्ति थेः

- जीवधारियों की प्रजातियों की पहचान करने के लिए उन्होंने आकारिकी-आधारित मानदंडों का सुझाव दिया और स्वयं इनका उपयोग किया।
- पहचानी गई प्रजातियों को सूचीबद्ध करने के लिए ऐसी वर्गीकरण प्रणाली का निर्माण किया जिसमें अलग-अलग सोपान थे।
- समस्त वर्गीकृत प्रजातियों के नामकरण के लिए द्विनाम पद्धति का निर्माण किया।
- लगभग 7000 पौधों का विवरण दिया और उन्हें वैज्ञानिक नाम दिए। यह रिकॉर्ड आज तक कोई नहीं तोड़ पाया है।

लीनियस की बाह्य आकार यानी मॉर्फोलॉजी आधारित वर्गीकरण पद्धति (मॉर्फोलॉजिकल टेक्सॉनॉमी) समय की कसौटी पर खरी उतरी है और आज डी.एन.ए.-आधारित वर्गीकरण के युग में भी इसका उपयोग अपरिहार्य रूप से किया जाता है। यही कारण है कि संसार की प्रमुख विज्ञान पत्रिका *नेचर* ने 2008 में लीनियस की वर्गीकरण पद्धति और द्विनाम पद्धति के 250 वर्ष पूरे होने के अवसर पर एक विशेषांक जारी किया है। इस अंक में कई विद्वत्तापूर्ण लेख हैं जिनमें ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के एच.सी.जे. गॉडफ्रे का लेख शामिल है। इस लेख में लीनियस की पद्धति के अनुसार वर्गीकरण करने वाले वैज्ञानिकों के सम्मुख आने वाली कठिनाइयों की चर्चा की गई है और उनके निराकरण के लिए कुछ उपाय सुझाए गए हैं। इस विशेषांक ने हमें भारत में लीनियन वर्गीकरण पद्धति की वर्तमान स्थिति और उसमें किए जा सकने वाले आवश्यक सुधारों के बारे में सोचने के लिए प्रेरित किया।

जीवन की सबसे बड़ी विशेषता उसकी विविधता है। इकॉलॉजिकल अनुसंधान कार्य के आधुनिक संस्करण का प्रमुख विषय जैव विविधता ही है। जैव मंडल की इस अनोखी विविधता के रहस्यों को समझने के लिए दुनिया भर के वर्गीकरणविद लीनियस द्वारा विकसित आकारिकीय वर्गीकरण पद्धति का उपयोग करते हैं। यह पद्धति जीवधारियों

के आकारिकीय लक्षणों के आधार पर प्रजातियों की पहचान करती है और जैव विविधता में वैज्ञानिकों की वर्तमान रुचि के कारण 250 वर्ष पुरानी हो जाने पर भी प्रचलन में है।

भारत को व्यापक जैव विविधता का वरदान मिला है। यह संसार के वृहद जैव विविधता वाले 12 प्रमुख देशों में से एक है। यहां वनस्पतियों और जंतुओं की ,25,000 प्रजातियों की पहचान की गई है। इस असीम विविधता का वैज्ञानिक अभिलेख बनाना एक चुनौती भरा काम है। अभी तक इस दिशा में जो काम हुआ है उसमें निम्नलिखित कमियां हैं: (1) कुल प्रजातियों के केवल 20 प्रतिशत को ही पहचानकर विवरण दिया गया है; (2) इस क्षेत्र का अधिकांश काम अंग्रेज़ और अन्य पश्चिमी देशों के वैज्ञानिकों ने किया है; (3) अधिकांश प्रारूप नमूने भारतीय संग्रहालयों में उपलब्ध नही हैं; (4) उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रमों में वर्गीकरण विज्ञान को जीवशास्त्र के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में नहीं रखा गया है।

आकारिकीय वर्गीकरण की कुछ सदाबहार उपलब्धियां हैं। यह पिछले 250 वर्षों से उपयोग में लाया जा रहा है और इसमें निरंतर सुधार होता रहा है। इस पद्धति से संसार के अधिकांश जीवधारियों की पहचान कर ली गई है और उन्हें वैज्ञानिक नाम दिए जा चुके हैं। विश्लेषण और संशोधन के लिए परिरक्षित नमूनों का एक समृद्ध भंडार संसार के संग्रहालयों में संदर्भ सामग्री के रूप में उपलब्ध है। इस पद्धति की विश्वसनीयता को कई बार चुनौती दी गई है, किंतु इसके विकल्प के रूप में कोई अन्य प्रणाली सामने नहीं आ सकी है। इस आलोचना के फलस्वरूप पहचान-कुंजियों में निरंतर सुधार किया जा रहा है। इस प्रणाली से प्राप्त आकारमितीय आंकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण करना संभव होता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इस प्रणाली के आधार पर भारत जैसे ऊष्णकटिबंधीय वृहद् जैव विविधता वाले देशों की प्रजातीय समृद्धि का दस्तावेज़ीकरण करना संभव हो पाता है। हमारे देश में, जहां एप्लाइड अनुसंधान कार्य सीमित है, आकारिकीय वर्गीकरण को प्राथमिकता के आधार पर अपनाए जाने की आवश्यकता है क्योंकि खरपतवारों और पीड़क जीवों के जैविक नियंत्रण के लिए प्रजातियों की सही-सही पहचान आवश्यक है।

कई भारतीय वर्गीकरणविदों का अन्य देशों के सहयोगियों से विदेशी कुंजियों और प्रारूपों के प्राप्त होने और शोधपत्रों में सह-लेखक के रूप में नाम प्रकाशित होने से उत्साहवर्धन हुआ है और इसी कारण इस पुरातन प्रणाली को बचाए रखने में मदद मिली है।

पश्चिमी देशों में नई पीढ़ी के वर्गीकरणविद प्रजातियों की पहचान के लिए डीएनए बारकोड का उपयोग करने लगे हैं, ठीक वैसे ही जैसे खुदरा व्यापार में बारकोड का इस्तेमाल किया जाता है। हमारे देश में इस प्रकार की आणविक वर्गीकरण तकनीक अपनाने के लिए न तो उच्च कोटि के उपकरण उपलब्ध हैं, न पैसा और न प्रशिक्षित लोग। और तो और, हमारे देश में आकारिकीय वर्गीकरण के लिए भी बुनियादी सुविधाएं व विशेष रूप से प्रशिक्षित लोग उपलब्ध नहीं हैं।

संसार में जीवधारियों की लाखों प्रजातियों की पहचान और विस्तृत विवरण अभी भी शेष है। एक और कठिनाई यह है कि ऊष्णकटिबंधीय जीवधारियों की पहचान कर सकने वाले विशेषज्ञों की संख्या बहुत सीमित है। आकारिकीय वर्गीकरण पद्धति की स्थिति भारत में विशेष रूप से कमज़ोर है। जीवशास्त्र की एक महत्वपूर्ण शाखा के रूप में उसे जो स्थान उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रमों में मिलना चाहिए था वह नहीं मिल पाया है। इस शाखा को पर्याप्त प्रतिष्ठा और धनराशि प्राप्त नहीं हो सकी है। धनराशि के अभाव में इस पद्धति से वे परिणाम नहीं मिल पा रहे हैं जिनका इस्तेमाल कृषि या उद्योगों के क्षेत्र में किया जा सके। जीवधारियों के कुछ समूहों के लिए आकारिकी-आधारित पहचान-कुंजियां बनाना एक कठिन काम है। कुछ समूहों में तो जीवन चक्र की कुछ ही अवस्थाओं में ऐसे लक्षण मिलते हैं जिनका उपयोग वर्गीकरण के लिए किया जा सके। कई विशेषज्ञ शौकिया वैज्ञानिकों द्वारा नमूनों की पहचान के अनुरोधों को ठुकरा देते हैं। हमारे राष्ट्रीय संग्रहालय भी अध्ययन के लिए प्रारूप नमूने उपलब्ध कराने में आनाकानी करते हैं। जब कुछ लक्षणों को पहचान-कुंजियों के रूप में चुना जाता है तो वर्गीकरणविदों में इन्हें लेकर मतभेद उभर आते हैं।

इसी प्रकार, वर्गीकरण की उच्चतर श्रेणियों (टैक्सॉन) को अलग-अलग रखने या एक ही मानने को लेकर भी मतभेद होते हैं। संशोधित पहचान-कुंजियों की मांग तो बहुत अधिक है, मगर इस काम की गति काफी धीमी है। अधिकांश टैक्सॉन के लिए हम जीवधारियों की स्थानीय और क्षेत्रीय विभिन्नताओं को नज़रअंदाज़ करके पाश्चात्य वर्गीकरणविदों द्वारा विकसित पुरानी पहचान-कुंजियों का ही उपयोग कर रहे हैं। आम तौर पर वर्गीकरणविद अपने प्रकाशनों को ऐसी शैली में प्रस्तुत करते हैं जो अन्य जीव शास्त्रियों के लिए अरुचिकर होती हैं। यदि प्रजातियों का निर्धारण केवल बाह्य आकार के आधार पर किया जाता है तो कई बार गुणसूत्रों, आणविक जीव शास्त्र और व्यवहार के अध्ययन से प्राप्त सूचनाओं से इस पर सवाल उठ जाते हैं। आणविक विकास की अवधारणा में हुई प्रगति के कारण गैर-आकारिकीय सूचना के आधार पर प्रजातियों की पहचान करना बहुत अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। केवल आकारिकी के आधार पर तय किए गए अधिकांश टैक्सॉन भारतीय संदर्भ में बेमानी हो गए हैं। आजकल प्रजाति का निर्धारण चुनिंदा जीन्स के क्षार क्रम के आधार पर किया जाता है। आजकल वर्गीकरण का मतलब केवल जीवधारियों के बाहरी लक्षणों का विवरण देने और नई प्रजातियों का नामकरण करना भर नहीं रह गया है। अनुसंधान कार्य से पता चला है कि बाहरी बनावट में अंतर न हो तो भी जीवधारी अलग-अलग प्रजातियों में रखे जा सकते हैं। इसके विपरीत, कई टैक्सॉन में शरीर की बाहरी बनावट में अंतरों का नई प्रजातियां बनने से कोई सम्बंध नहीं होता है।

ऊपर दिए गए विवरण से स्पष्ट है कि फिलहाल जैविक संपदा का वर्गीकरण करने, नई प्रजातियों का नामकरण करने और इनका दस्तावेज़ीकरण करने के लिए आकारिकीय वर्गीकरण पद्धति पर निर्भर रहना ही होगा क्योंकि इसका कोई विकल्प तुरंत उपलब्ध नहीं है। आणविक आधार पर काम करने वाले वर्गीकरणविद भी अपनी परियोजनाओं के लिए लीनियन वर्गीकरण को ही शुरुआती बिंदु मानते हैं।

अंत में आकारिकीय वर्गीकरण प्रणाली की विश्वसनीयता में सुधार करने के लिए हम यहां कुछ सुझाव दे रहे हैं।

वर्गीकरण सम्बंधी प्रकाशनों में निम्नलिखित प्रकार के अभिलेखों और संशोधन कार्य को भविष्य में प्राथमिकता दी जानी चाहिए :

- इनका आधार नए प्रारूप नमूने होना चाहिए, संग्रहालयों में रखे पुराने नमूने नहीं।
- संग्रह करने के स्थान का नक्शा, संग्रहालय और नमूने की क्रम संख्या आदि जानकारी सही होनी चाहिए।
- उपयोग की गई प्रारूप सामग्री राष्ट्रीय संग्रहालयों से ली गई हो न कि निजी संग्रहों से।
- सूक्ष्म किंतु महत्वपूर्ण अंगों का आधार इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी के आंकड़े होना चाहिए।
- कुल यानी फैमिली के नीचे के नए सोपानों यानी वंश, प्रजाति और उप-प्रजाति के निर्माण की पुष्टि आणविक जीव शास्त्रीय और जैव-रासायनिक आंकड़ों के द्वारा की जानी चाहिए।
- स्थानीय और क्षेत्रीय पहचान-कुंजियों का उपयोग किया जाना चाहिए, न कि विदेशी कुंजियों का।
- जीवन चक्र की सभी अवस्थाओं को आधार बनाया जाना चाहिए, न कि किसी एक अवस्था को।
- पहचान ऐसे बाह्य लक्षणों पर आधारित होनी चाहिए जिन्हें गैर-विशेषज्ञ भी पहचान सकें।
- भारतीय संग्रहालयों में उपलब्ध प्रारूप सामग्री पर आधारित हों, अंतर्राष्ट्रीय संग्रहालयों में उपलब्ध सामग्री पर नहीं।
- ऐसे प्राकृतवासों से प्राप्त किए गए हों जहां वे पहले खोजे न गए हों।
- सूक्ष्म अंगों के अध्ययन के लिए विच्छेदन और स्लाइड बनाने से सम्बंधित विस्तृत निर्देश हों।
- ऐसी सुव्यवस्थित पहचान-कुंजियां और चित्र दिए गए हों जिनका उपयोग क्षेत्र में, आसानी से पहचाने जा सकने वाले लक्षणों की सहायता से गैर-विशेषज्ञों द्वारा भी किया जा सके।
- निकट सम्बंधी वंशों और प्रजातियों के बीच अंतर ऐसे न्यूनतम और असंदिग्ध लक्षणों के माध्यम से स्पष्ट किया जाए जिन्हें गैर-विशेषज्ञ सरलता से उपयोग

कर सकें।

- आवश्यकता पड़ने पर परम्परागत प्रारूप से हट कर हों ताकि उनका उद्देश्य (विशेषज्ञों की सहायता के बिना आसानी से पहचान) पूरा हो सके।
- केवल वर्गीकरण सम्बंधी मूल्य के स्थान पर मानव कल्याण/आर्थिक मूल्यों पर आधारित हों।
- रोगवाहकों, पीड़कों और उनके प्राकृतिक शत्रुओं की प्रजातियों की पहचान के लिए कोशिकीय अनुवांशिकी और व्यवहार से सम्बंधित आंकड़े शामिल हों।

नमूनों तथा वर्गीकरण अभिलेखों के संग्रहण, परिरक्षण, और भंडारण में सुधार के लिए निम्नलिखित सुझाव हैं :

- उन्नत विधियों से नमूनों का परिरक्षण जैसे फफूंद, परागकणों, कीटों के अंडों, आदि का कम तापमान पर परिरक्षण।
- इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी का उपयोग करते हुए सूक्ष्म लक्षणों से सम्बंधित आंकड़ों का संग्रहण।
- वर्गीकरण से सम्बंधित समस्त आंकड़ों का ई-संस्करण में भंडारण ताकि उन्हें शीघ्र प्रेषित किया जा सके।
- दुर्लभ और क्षेत्रीय महत्व की प्रजातियों के प्रारूपों का राष्ट्रीय संग्रहालयों में भंडारण।
- अधोसंरचना, प्रशिक्षित लोगों और संदर्भ साहित्य के मामले में अपने संग्रहालयों को उन्नत करना।
- उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रमों में एक विषय के रूप में वर्गीकरण का समावेश और विश्वविद्यालयों में वर्गीकरण अध्ययन शालाओं की स्थापना।
- गैर-विशेषज्ञों के लिए भारतीय प्राणी वैज्ञानिक सर्वेक्षण और भारतीय वनस्पति वैज्ञानिक सर्वेक्षण के विशेषज्ञों द्वारा प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन।
- नए-नए जैविक रूपों की खोज के लिए अभयारण्यों और राष्ट्रीय उद्यानों में नियमित अभियान।
- डिजिटल नमूनों/चित्रों की पहचान के लिए उपरोक्त संस्थाओं द्वारा ऑन-लाईन सेवा का संचालन।
- नमूनों के संग्रहण, तैयारी, प्रजातियों की प्रारंभिक छंटाई और अन्य सम्बद्ध जानकारी का संग्रह बनाने के लिए शौकिया वर्गीकरणविदों की सेवाएं लेना।
- इस कार्य में रुचि रखने वाले शौकिया वर्गीकरणविदों, जीवशास्त्र के विद्यार्थियों, स्कूल शिक्षकों, आदि को वर्गीकरण विज्ञान में प्रशिक्षित करना, विशेष रूप से उन्हें जो समृद्ध जैव विविधता क्षेत्रों के निकट रहते हैं।

विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों के टैक्सॉन की पहचान करने के लिए बहुत उपयोगी संसाधन (फील्ड गाइड्स, पुस्तिकाएं और स्वयं वर्गिकरणविद) उपलब्ध हैं, किंतु समृद्ध जैव विविधता वाले ऊष्णकटिबंधीय संदर्भ में इनका अभाव है। हमारा मत है कि प्राणी वैज्ञानिक व वनस्पति वैज्ञानिक सर्वेक्षण द्वारा हमारे जंतुओं और वनस्पतियों के बारे में प्रकाशित अभिलेख विशेषज्ञों के लिए तो बहुमूल्य हो सकते हैं किंतु गैर-विशेषज्ञों को इनसे कोई मदद नहीं मिल पाती और नमूनों की पहचान करने में उन्हें कठिनाई होती है। अतः इन ग्रंथों में निम्नलिखित परिवर्तन किए जाने चाहिए :

- ऐसी सरल पहचान-कुंजियां जिनका उपयोग गैर-विशेषज्ञ भी कर सकें।
- फील्ड गाइड जिनमें चित्र और रंगीन फोटो हों।
- पहचान-कुंजियों में प्रयुक्त शब्दावली के लिए चित्रयुक्त सूचियां।
- देश के अभयारण्यों और राष्ट्रीय उद्यानों में पाए जाने वाले जंतुओं और वनस्पतियों के लिए फोटो और पहचान-कुंजियां।
- आदिवासियों में वितरण के लिए ऐसी पुस्तिकाओं का प्रकाशन जिनकी सहायता से दुर्लभ और ज़ोखिमग्रस्त वनस्पतियों को पहचाना जा सके और उनके अनावश्यक विनाश और अत्यधिक उपयोग पर रोक लग सके।
- अभयारण्यों और राष्ट्रीय उद्यानों के प्रमुख पौधों और जंतुओं की पहचान के लिए सचित्र पहचान-कुंजियों का प्रकाशन ताकि जैव विविधता की खोज करते समय इन प्रजातियों को छोड़ा जा सके।
- पश्चिमी देशों में उपलब्ध जीन बैंक की तर्ज पर भारतीय पौधों और जंतुओं के लिए व्यवस्थित डैटाबेस का निर्माण जिसमें उनके वर्गीकरण, इकॉलॉजी, जीनोम और जातिवृत्त से सम्बंधित विवरण हो।

- आदिवासियों द्वारा जैव विविधता वाले क्षेत्रों में जीवधारियों की पहचान के लिए उपयोग में लाई जाने वाली पहचान-कुंजियों का संग्रहण और दस्तावेज़ीकरण। नीलगिरी जैवमंडल आरक्षित क्षेत्र में ऐसी एक मार्गदर्शिका बनाई भी गई है।

प्राचीन आकारिकीय वर्गीकरण विज्ञान को आधुनिक युग में बनाए रखने के लिए कुछ सुझाव गॉडफ्रे ने दिए हैं:

1. वर्गीकरणविदों को उनके विज्ञान और जीवशास्त्र की अन्य शाखाओं के बीच सम्बंध स्पष्ट होना चाहिए।
2. उनके परियोजना प्रस्ताव उन समुदायों पर केंद्रित होने चाहिए जो अनुसंधान कार्य का उपयोग कर सकें।
3. आकारिकीय सूचना को आधुनिक आणविक जीव शास्त्रीय तकनीकों के साथ जोड़ा जाना चाहिए।
4. वर्गीकरण सम्बंधी जानकारी अन्य कार्यकर्ताओं को उपलब्ध कराई जानी चाहिए।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि भारत में आकारिकीय वर्गीकरण विज्ञान की स्थिति काफी खराब हो चुकी है। जैव विविधता के दस्तावेज़ीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए इसमें आमूल परिवर्तन करने होंगे। पश्चिमी देशों के आणविक वर्गीकरण उद्यम के समान इसे भी पर्याप्त धनराशि और प्रशिक्षित लोगों की आवश्यकता होगी। यदि हमें अपनी जैव विविधता का दस्तावेज़ीकरण और उसका समुचित उपयोग करना है, तो और कोई उपाय नहीं है। लीनियस के सभी भारतीय शिष्यों से हमारा अनुरोध है कि वे इससे जुड़े मुद्दों पर गंभीरता से विचार करें और सामूहिक प्रयासों से इसे एक वास्तविक एप्लाइड विज्ञान बनाएं। ***(स्रोत फीचर्स)***

यह लेख पहले करंट साइन्स पत्रिका में प्रकाशित हुआ था।